



Date: 17-03-26

Beginning and end

The state must allow its citizens the right to die with dignity

Editorial



The incontrovertible nature of both life and death makes them fiendishly difficult to legislate or adjudicate. Interfering with the very elemental beginning and end points of life must seem daunting. Nothing else can explain the long dalliance that laws have had with euthanasia to facilitate the intentional ending of a life, globally. In India, last week, the Supreme Court, in a landmark decision, approved the withdrawal of life support, including artificial nutrition and hydration, for Harish Rana, who went into a persistent vegetative state (PVS) following a head injury over 12 years ago. Invoking the constitutional idea of dignity, the Court

observed that it would not be compatible with temporarily keeping alive a terminally ill patient who is brain dead or in a PVS, only because it is possible to leverage technological advancements to do so. This forces a life of indignity: patients endure a slow, agonising death. As the end of life approaches, a loss of control over human faculties denudes life of its meaning, it added. The Court went on to expand the right to live with dignity under Article 21 to encompass the right to die with dignity. In India, in the absence of legislation on the subject, the courts have consistently had to engage with the euthanasia question over the years. The *Smt. Gian Kaur vs The State Of Punjab* (1996) case might have set off the trend, but the debate entered the public realm with the *Aruna Shanbaug* petition in 2011. The Court, in this instance, did not allow for euthanasia as the nurses caring for her demurred, but went on to lay down guidelines for withdrawing or the withholding of medical treatment or medical support to allow for natural death. In 2018, a Supreme Court Constitution Bench held that the right to die with dignity is a fundamental right.

Besides benefitting Harish Rana in the instant case, the judgment will undoubtedly make it easy for terminally ill patients and their families 'to let go'. As technology advances in leaps and bounds, more life-preserving hacks will become available to all who are able to pay for them but could erode the patient's dignity. The judgment is intended to introduce compassion into end-of-life care for patients with unalterable medical conditions. The concept of a living will, a legal document empowering individuals to state their preferences for medical treatment in situations where they become incapacitated, vegetative or are unable to communicate, again endorsed by the Court, must also be popularised. In the grey zones, it is the law that can give people the courage to take the right call.



दैनिक भास्कर

Date: 17-03-26

‘प्रहार’ से सुरक्षा-व्यवस्था में समन्वय को मजबूती मिलेगी

शशि थरूर, (पूर्व केंद्रीय मंत्री और सांसद)



पिछले महीने गृह मंत्रालय ने देश की पहली आधिकारिक आतंकवाद-रोधी रणनीति जारी की थी। इसे ‘प्रहार’ कहा गया है। यह महत्वपूर्ण दस्तावेज टुकड़ों में बंटी हुई और केवल प्रतिक्रियाएं देने वाली सुरक्षा व्यवस्था को एक संगठित ढांचे में बदलने का दृष्टिकोण दर्शाता है। इसका उद्देश्य भारत की सुरक्षा संस्थाओं को एक साझा प्लेबुक उपलब्ध कराना है।

भारत लगभग साढ़े तीन दशकों से आतंकवाद से जूझ रहा है। यह तब शुरू हुआ था, जब पाकिस्तान ने अफगानिस्तान में सोवियत संघ के खिलाफ अपने मुजाहिदीन अभियानों की सफलता से उत्साहित होकर वही रणनीति भारत के खिलाफ अपनाने का फैसला किया था।

जम्मू और कश्मीर में सीमा-पार के विद्रोहों से लेकर वामपंथी उग्रवादियों और अल-कायदा तथा इस्लामिक स्टेट जैसे वैश्विक नेटवर्क तक- आतंकवाद के साथ भारत का अनुभव किसी भी अन्य देश से अधिक विविधतापूर्ण और दीर्घकालिक रहा है।

ऐतिहासिक रूप से भारत ने आतंकवाद का सामना स्थानीय सैन्य प्रतिक्रियाओं, यूएपीए जैसे विशेष कानूनी साधनों और विभिन्न एजेंसियों की अलग-अलग प्रक्रियाओं के माध्यम से किया है। आईबी से लेकर राज्य-स्तरीय एंटी-टेररिज्म स्क्वाड्स (इंडिया) तक, संबंधित एजेंसियां अक्सर अलग-अलग दायरों में काम करती थीं और जानकारी का आदान-प्रदान प्रायः किसी हमले के बाद ही होता था। इससे ऐसी व्यवस्था बनी, जो एक समन्वित सुरक्षा कवच मुहैया कराने के बजाय जीरो-टॉलरेंस की बयानबाजी तक ही सीमित रहती थी।

‘प्रहार’ का उद्देश्य इस प्रतिक्रियात्मक और बिखरे हुए दृष्टिकोण को बदलकर एक समग्र सिद्धांत स्थापित करना है, जो देश की सुरक्षा व्यवस्था में एकता और समन्वय को मजबूत करे। किसी विदेशी पर्यवेक्षक को यह केवल नौकरशाही का एक साधारण पुनर्गठन लग सकता है।

लेकिन जिस देश ने 1993 के मुम्बई धमाके, 2001 में संसद पर हमला और 2008 में 2611 जैसी त्रासदियां झेली हैं, उसमें यह इस बात की देरी से की गई स्वीकारोक्ति है कि खतरा राज्य की सुरक्षा रणनीतियों से कहीं तेजी से विकसित हुआ है।

‘प्रहार’ क्राइसिस-रिस्पॉन्स मॉडल की जगह प्रिवेंशन-फर्स्ट के मॉडल पर काम करता है, यानी संकट की स्थिति में प्रतिक्रिया देने के बजाय इस पर जोर देना कि वैसी नौबत ही न आए। इसमें खुफिया-सूचना आधारित कार्रवाई पर बल दिया गया है और मल्टी एजेंसी सेंटर (मैक) को रियल-टाइम डेटा-एकीकरण प्रणाली के केंद्र में रखा गया है।

जॉइंट टास्क फोर्स ऑन इंटेलिजेंस के साथ मैक की भूमिका को केंद्रीकृत करके इस रणनीति का उद्देश्य अलग-अलग इकाइयों में काम करने की प्रवृत्ति को समाप्त करना और यह सुनिश्चित करना है कि राज्य की पुलिस और केंद्रीय एजेंसियां एक समन्वित कमान के तहत कार्य करें।

‘प्रहार’ आधुनिक खतरों- जैसे ड्रोन-आधारित घुसपैठों और संचार एन्क्रिप्शन को भी स्पष्ट रूप से संबोधित करता है और संगठित अपराध व आतंकवादी नेटवर्क के गठजोड़ को पहचानता है। साथ ही यह जांच की हर अवस्था- प्रारम्भिक रिपोर्ट से लेकर अंतिम अभियोजन तक में विधि-विशेषज्ञों को शामिल करने की व्यवस्था करता है, ताकि कानून का राज केवल एक नारा न रह जाए, बल्कि यह सुनिश्चित करने का साधन बने कि प्रक्रियागत त्रुटियों के चलते हाई-प्रोफाइल संदिग्ध लोग जवाबदेही से बच न सकें।

यह दृष्टिकोण समस्या के मूल कारणों को भी संबोधित करता है। मानवाधिकारों पर दिया गया जोर इस बात की स्वीकारोक्ति है कि कठोर और दमनात्मक उपाय कभी-कभी आतंकवाद को उलटे बढ़ावा दे सकते हैं।

इसके अलावा यह दस्तावेज डिजिटल कट्टरपंथीकरण के बढ़ते खतरे पर भी ध्यान देता है- खासकर तब, जब वह डार्क वेब, क्रिप्टोकॉर्सेसी वालेट्स और ड्रोन जैसी तकनीकों के साथ मिलकर काम करता है।

बहरहाल, ‘प्रहार’ की सफलता के लिए 30 राज्य पुलिस बलों का सहयोग भी जरूरी है, जिनमें से कई संसाधनों की कमी से जूझ रहे हैं, तकनीकी रूप से पीछे हैं और स्थानीय राजनीति के प्रभाव में रहते हैं। इन राज्यों में आतंक-रोधी तंत्र को मानकीकृत करने के लिए प्रशिक्षण और बुनियादी ढांचे में भारी निवेश की आवश्यकता पड़ेगी।

अतीत में भारत की सुरक्षा रणनीतियां गोपनीय दस्तावेजों में दबा दी जाती थीं। लेकिन केंद्र सरकार ने ‘प्रहार’ दस्तावेज को खुले तौर पर साझा करके नागरिकों और अंतरराष्ट्रीय समुदाय- दोनों को अपनी प्रतिबद्धता का संकेत दिया है।

जनसत्ता

Date: 17-03-26

किसकी जवाबदेही

संपादकीय

किसी भी सरकारी या निजी अस्पताल में मरीज प्रायः अपने जीवन की रक्षा के लिए जाते हैं, लेकिन जब वहीं उनकी जान जोखिम में पड़ जाए, तो इसकी जिम्मेदारी किसकी है? चिकित्सा को व्यवसाय बना कर देश में हर जगह खुल रहे अस्पतालों में जिस तरह सुरक्षा नियमों की अनदेखी की जाती है, उस पर सवाल उठना स्वाभाविक है। दिल्ली से लेकर कोलकाता, झांसी, अहमदाबाद और जयपुर तक सभी जगहों पर आग लगने की घटनाओं में मरीजों की मौत की वजह अग्निशमन संबंधी सुरक्षा मानकों में घोर लापरवाही पाई गई। ओड़ीशा के कटक में रविवार देर रात राज्य सरकार द्वारा संचालित एससीबी मेडिकल कालेज एवं अस्पताल में भीषण आग मरीजों के लिए सबसे सुरक्षित सघन चिकित्सा कक्ष में लग गई और उसमें कम से कम दस मरीजों की मौत हो गई और ग्यारह चिकित्सा कर्मचारी झुलस गए। यह तब है जबकि मुख्यमंत्री ने कुछ महीने पहले ही राज्य के सभी चिकित्सा संस्थानों को आग से बचाव के उपाय करने की हिदायत दी थी। सवाल है कि क्या वहां अग्नि सुरक्षा के बुनियादी मानकों का भी पालन नहीं किया जा रहा था ? इस लापरवाही की जवाबदेही किसकी है? यह दुखद ही है कि अस्पतालों में आग लगने की घटनाओं से कभी सबक नहीं लिया गया। कई जगहों पर तो आग से बचाव के साधन नहीं थे, तो कहीं आपातकालीन निकास की उचित व्यवस्था नहीं थी। यहां तक कि अग्निशमन सुरक्षा प्रमाणपत्र की मियाद निकल जाने पर भी न तो अस्पतालों को चेतावनी दी जाती है और न ही उन पर कोई कड़ी कार्रवाई होती है। छोटे शहरों से लेकर महानगरों तक में अमूमन हर जगह निजी और छोटे अस्पताल बिना वैध लाइसेंस और सुरक्षा प्रमाणपत्र के चलते पाए जाते हैं। क्या ऐसा संबंधित महकमे की लापरवाही और अधिकारियों की सांठगांठ के बिना संभव हो सकता है ? कायदे से सभी चिकित्सा संस्थानों में अग्नि से बचाव के साधनों की नियमित और सख्ती से जांच की जानी चाहिए। ऐसा न होने का ही नतीजा है कि ओड़ीशा में अति सुरक्षित सघन चिकित्सा कक्ष में भर्ती कई मरीजों की जान चली गई। अब इस घटना की जांच कराई जाएगी, लेकिन इसके शिकार मरीज तो कभी घर लौट कर नहीं आएंगे।

Live
हिन्दुस्तान
.com

Date: 17-03-26

उलझता युद्ध

संपादकीय

ईरान-अमेरिका युद्ध शुरू हुए आधा महीने से ज्यादा वक्त बीत गया, लेकिन दिनों-दिन यह उलझता जा रहा है। यह युद्ध बड़ी चिंता ही नहीं, बल्कि मानवता का अपमान है। युद्ध में दोनों तरफ से अतिवादी द उठाए जा रहे हैं। युद्ध रोकने की कोशिशें नदारद हैं, पर अमेरिका के ज्यादातर सहयोगी इस युद्ध के लिए तैयार नहीं हैं। तेल का अभाव झेल रही दुनिया जानती है, होर्मुज जलडमरूमध्य पर यातायात का सुचारु होना जरूरी है। पहले अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप को लग रहा था कि वह ईरान पर हावी हो जाएंगे और होर्मुज मार्ग पर असर नहीं पड़ेगा। अब यह काम ट्रंप या उनकी सेना नहीं कर पा रही है, तो उन्होंने चीन और नाटो के सदस्य देशों को एक तरह से ललकारा है कि ये देश इस समुद्री मार्ग को खुलवाने के लिए आगे आएं। इस बीच, सोमवार को कच्चे तेल की कीमत लगभग 105 डॉलर प्रति बैरल तक पहुंच गई है। वास्तव में, यह ऐसे देशों को युद्ध में शामिल करने की एक चाल हो सकती है, जो युद्ध के पक्ष में नहीं हैं। सीधा सा अर्थ है - होर्मुज को खुलवाने की कोई भी कोशिश ईरान से लड़ने के समान होगी।

इस त्रासद युद्ध के संबंध में दूसरी सबसे अहम बात है, अफवाहों और डीपफेक का इस्तेमाल। अफवाहों का बाजार ऐसा गर्म है कि कभी ईरान के नए सर्वोच्च नेता के न होने या बुरी तरह से घायल होने की खबर आती है, तो कभी इजरायल के सर्वोच्च नेता के निधन की खबर आती है। खुद को जिंदा बताने के लिए इजरायली नेता अपना वीडियो जारी करते हैं, जिसे एक एआईटूल ग्लोक डीपफेक करार देता है। यह एक ऐसा युद्ध है, जिसमें एकाधिक देश अपने नेताओं को सुरक्षित करने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा रहे हैं। तकनीक के आधुनिक दौर में यह बहुत खतरनाक बात है कि किसी भी नेता की हत्या के लिए उसका 'लोकेशन' ज्ञात होना पर्याप्त है। अगर इजरायल को ईरानी नेताओं की 'लोकेशन' चाहिए, तो ईरान भी कम नहीं है। नेताओं की 'लोकेशन' की बेरहम तलाश के दौर में सच्चाई अपना 'लोकेशन' गंवा चुकी है। आज हकीकत यह है कि दुनिया विश्वास या अविश्वास की बेहद नाजुक डोर पर टिकी है। ध्यान रहे, विगत महीनों से ट्रंप हर किसी पर टैरिफ की तलवार भांज रहे थे, अमेरिकी मदद और संवेदना के दायरे को समेटते चले जा रहे थे। आज जब जरूरत आन पड़ी है, तब उनके नाटो के देश ही मदद का हाथ नहीं बढ़ा रहे हैं। विडंबना देखिए, कुछ ही महीने पहले ट्रंप को नाटो की जरूरत नहीं थी, पर आज उन्हें इसकी याद आ रही है। यह एक सबक है कि दुनिया में किसी महाशक्ति का व्यवहारकुशल होना जरूरी है, तभी आड़े वक्त में दूसरे देश साथ खड़े होते हैं।

जहां तक भारत की बात है, तो उसे होर्मुज में ईरान ने कुछ राहत दी है, स्थितियां बहुत तो नहीं बिगड़ेंगी, पर तेल-गैस की किल्लत कमोबेश बनी रहेगी। तेल के मामले में भारत के आत्मनिर्भर न होने की कीमत सबको चुकानी पड़ेगी। भारत के लिए यह बहुत जटिल समय है और उसे संतुलन साधकर चलना है। जहां भारत में एक तबकाईरान का साथ देने के लिए बेचैन है, तो वहीं, ऐसे भारतीय भी हैं, जो ईरान व अन्य देशों से स्वदेश लौटने को बेताब हैं। बड़ी संख्या में भारतीयों को स्वदेश लाया जा रहा है। अकेले सोमवार को यूईई, सऊदी अरब व अन्य देशों से भारत के लिए 45 उड़ानें तय थीं। वैसे युद्ध शुरू होने के बाद से करीब 2,20,000 भारतीय लौट चुके हैं। सबको यह दुआ और उम्मीद करनी चाहिए कि भारतीयों को देश व विदेश में कम से कम परेशानी हो।